श्री देवदेवेश्वर महाकाव्यम् रचित ग्रन्थ के नायकः मराठा छत्रपति शिवाजी महाराज का वर्णन

नीतू कुमारी

श्री देवदेवेश्वर महाकाव्यम् '' ग्रन्थ में छत्रपति शिवाजी महाराज से लेकर पेश्वाकुलोत्पन्न'' ''बालाजी बाजीराव'' के वर्णन तक की कथा वर्णित है। इनके अतिरिक्त और भी कई मराठा शक्ति के अभ्युदय और विकास में सहायक सिद्ध हुए हैं। उन्ही का इस ग्रन्थ में ऐतिहासिक दृष्टिकोण से वर्णन किया गया है।

श्री देवदेवेश्वर महाकाव्य के नायक है छत्रपति शिवाजी महाराज जी।

ऐतिहासिक प्रमाण के अनुसार इनके पिता का नाम ''शाहजी भोंसले'' और माता ''जीजाबाई'' था। माता ने महापुरूषों एवं वीरों की कहानियाँ सुना-सुनाकर इनमें आदभ्य, साहस, शौर्य एवं धैर्य भर दिया था। इनके गुरू का नाम 'दादाकोण देव' था। शिवाजी के पिता बीजापूर के नवाब 'आदिलशाह' के अधीनस्थ कर्मचारी थे। राजपरिवार की गतिविधियों के सन्निकट रहकर शिवाजी ने स्वभावतः प्रशासन एवं युद्ध की कला सीख ली थी। बौद्धिक चातुरी तो इनका प्रकृति सिद्ध गुण था। प्रस्तुत महाकाव्य में कवि ने शिवाजी के राष्ट्र प्रेम को अधिक प्रकाशित किया है। जिस राष्ट्र प्रेम की भावना से प्रेरित होकर शिवाजी ने अपने शौर्य, छद्म युद्धनीति एवं कूटनीति के द्वारा मुगलों के छक्के छुड़ा दिये।

शिवाजी भारत माता के सच्चे सपूत थे। भारत देश की मिट्टी से इनका प्रगाढ़ प्रेम था। इनकी संस्कृति पर इन्हें गर्व है और सनातन धर्म के प्रति इनहें गाढ़ आस्था था। इस पवित्र भारत-भूमि पर यवनों (मुगलों) के शासन से इनका हृदय व्यथित है। वे हरक्षण प्रयासरत है कि मुगलों को भारत से कैसे भगाया जाये।

विदेशी शासकों से उत्पीड़ित समाज के लिये शिवाजी ही एक मात्र आशा है, आधार है, अवलम्ब है। हर व्यक्ति ऐसे वीर सपूत की शुभकामना करता है।

सतीनाम् सताम् त्रैवर्णिकस्य आर्यकुलस्य धर्मस्य,
भारतवर्षस्य आशा सन्तान वितानस्या नेवाऽऽश्रयः।''

शिवाजी के दूत महादेव पण्डित जयसिंह को औरंगजेब के विरूद्ध उत्प्रेरित कर रहे थे। वे बतलाते है कि भले ही राजपुताने के राजाओं में सामर्थ्य न हो, लेकिन मराठे सामर्थ्यवान हैं। इसीलिए तो महाराष्ट्र पर मुगलों का अधिपत्य नहीं हो सका है। यवनों के रक्त की प्यासी तलवारों से सुशोभित सहस्रो महाराष्ट्र केसरी घूम रहे हैं। आप (जयसिंह) हम मराठों का अपना सहयोगी बनाकर कला ही औरगंजेब के विरूद्ध बिगुल फूँक दी जिये। सभी मराठे वीर आपके साथ है। आप तनिक न सन्देह करें और न संकोच ही आप भक्त शिवाजी को ही अपना सेवक बना ली जाए। यहाँ महादेव पण्डित के मुख से वीर शिवाजी के ही राष्ट्रप्रेम को अभिव्यक्त किया गया है। शिवाजी भारत भूमि की रक्षा के लिए हमेशा चिन्तित है, संयोगवश यदि मुझे वीरगति भी प्राप्त हो जायेगी, तो भी आपलोगों के सकुशल रहने पर महाराष्ट्र राज्य फिर भी स्वतंत्र ही रहेगा, पुनः वैदिक धर्म को शरण मिलेगी और पुनः भारतवर्ष के शत्रुओं की पत्नियों के हृदय में कम्पन होता रहेगा। किन्त मेरे साथ ही आपलोगों के ही भारत भूमि को छोड़ देने पर धर्म की धुरी को कौन धारण करेगें? भारतवासियों की स्वतंत्रता का भार कौन सँभालेगा और कुछ भी मत कहिये। मेरे साथ जा रहे साथियों की तथा मेरी मंगल कामना कीजिए, जिससे हम खेल-खेल में ही इन नीच अहंकारियों को पराजित कर सकें।।

इस प्रकार की चिन्ता-तुरता नवम निःश्वास में भी व्यक्त हुई है-

गवेषिका, संस्कृत विभाग, पटना विश्वविद्यालय, पटना

यदि भवताऽडथ्वधूतमूरी कुर्य्याम्, तत् प्रथमं भगवती भारतभूव ब्राह्मणानां क्षत्रिया राज्य मांस रूधिर कद्दमेन पिङ्किला भविती, परतच्च भवादश्शेषु भारतरत्नेषु प्रजाकण्डलं निष्कण्टकी कृत्य यवनराजहस्ते समर्पितवत्सु पुनस्तदेव मन्दिर, मर्दन न तीर्ककन्थनम् वेद च्छेदनम, धनुध्वंसनं व पेद-पदे संवतत्संत अहह। प्रणानगणयित्वा रक्षितोऽपि मचाञ्यं देशोऽध भवच्चन-द्रहाल चन्द्रिका चुम्बितोऽसाध्येन दुर्दशा ज्वरेणोल्लीढः।

यहाँ शिवाजी अत्यन्त भावुक हो उठे हैं। उनके हृदय व्यथा आँसू बनकर बह चली है। वे चाहते है किसी भी तरह यह भारतम् यवनों के अधिकार से मुक्त हो, भारतवासी उन्मुक्त वातावरण में साँस ले सकें। वे अपने जीते जी देश को यवनों के अधीन नहीं देखना चाहते। तभी तो स्पष्ट शब्दों में कहते हैंकि पहले मुक्ति मार डालो, फिर देश को यवनों के हाथों में समर्पित कर देना।

शिवाजी प्रकृतितः स्वतंत्रता प्रेमी थे। उनकी स्वास्थ्य परीक्षा के लिए औरंगजेब के महल (कैदखाना) में पहुँचाए हुए (छद्मवेषधारी) चिकित्सक कहता है कि आप स्वतंत्र थे आज परतन्त्र हो गये है। यही चिन्ता आपके रोग का कारण है।

मन्ये स्वतंत्रतामपहाय परवान् संवश्न्तः-
इति चिन्तारोजोऽयन।।[1]

देखने वाला अन्य व्यक्ति आसानी से समझ जाता है कि महाराज शिवाजी देश की परतन्त्रता से दुःखी है। वे भारतमाता को परतन्त्रता की श्रृंखला में नहीं देखना चाहते।

धर्म-संस्कृति के संरक्षकः

महाराज शिवाजी महान् धर्मनिष्ठ है। सनातन धर्म और भारतीय संस्कृति के पुजारी है। भगवान् शंकर के प्रति इनकी अन्नय आस्था है।

भगवन्। अखिलं कुशलं प्रभूणामनुग्रेहंणा-
इस्मालमखिलानाम् उङ्गीकृत महाव्रते
च मा स्म पदं धात् कश्चनान्तराय
इत्येव सदा प्रार्थ्गते भगवान् भूतनाथः।

ये अपने उपास्य शिव के प्रति आत्म निवेदन करते है। शिवभक्तों के प्रति भी इनकी श्रद्धा है। शिव मन्दिर के पुजारी तो इनके विशेष श्रद्धा पात्र है।

संस्कृति के प्रति भी शिवाजी का अनुराग है। यह भारतीय संस्कृति की मर्यादा में रहकर ही अपना कार्य करते हैं। ये यवनों के प्रति छद्म एवं छलपूर्ण व्यवहार करते है, किन्तु किसी भी भारतीय के प्रति दुर्व्यवहार नहीं करते। ये किसी निरपराधी को दण्ड नहीं देते।

काव्य में नायक की उपादेयता

काव्य में नायक की कथावस्तु को आगे बढ़ाता है। कवि नायक का चयन कथावस्तु के अनुरूप ही करता है। प्रख्यात वस्तु में तो कवि नायक एवं अन्य मुख्य पात्रों में तथा उनके चरित्र में परिवर्तन नहीं कर सकता। तथापि आवश्यकतानुसार कवि नये पात्र एवं नयी घटनाओं की कल्पना तो करता ही है। यहाँ कवि का उद्देश्य कथावस्तु को सरस बनाया तथा पात्रों को अपने काव्य की कथावस्तु के अनुरूप बनाना होता है। कवि नायक के मुख्य चरित्र की रक्षा करता हुआ ही उसे अपने अनुरूप ढालता है। काव्य में, विशेषतः नाटक में नायक के महत्त्व का अंकन मुख्यतः तीन रूपों में किया जाता है।

वस्तु संगठन की दृष्टि से- काव्य के समस्त कार्य-व्यापार और अन्य सभी पात्र नायक की अभीष्ट सिद्धि के ही तो अंग होते हैं। प्रतिनायक भी नायक को उत्कर्ष पर पहुँचाने के लिए ही विरोध करता है। अधि कारिक कथा का प्रमुख पात्र तो वह होता ही है, प्रासंगिक कथाओं के नायक भी उसके व्यक्तित्व से भिन्न अपना अस्तित्व नहीं रखते।

यदि नायक गुण सम्पन्न न हो तो काव्य की कथा वस्तु का सम्यक् विकास सम्भव नहीं होगा। नायक के दुर्बल रहने से प्रतिनायक का प्रभाव इस प्रकार व्याप्त हो जायगा कि नायक के प्रतिनिधित्व करने की बात ही दब जायगी। पाठकों को ऐसा प्रतीत होने लगेगा कि सारी घटनायें खलनायक का ही चक्कर लगा रही है।

कथावस्तु की समस्त योजन नायक को ध्यान में रखकर ही की जाती है। कार्य वस्थओं का क्रमिक विकास नायक के प्रयास के अनुरूप ही होता है। नायक का स्वरूप परिस्थिति के परिवर्तक के साथ बदलना

नहीं चाहिए। इसीलिए तो भारतीय नाट्यशास्त्र में नायक के पहले 'धीर' विशेषण का प्रयोग किया गया है। वास्तव में नायक के उत्थान पतन के अनुरूप ही कथावस्तु का विधान किया जाता है। यह अस्वाभाविक भी नहीं है, क्योंकि चरित्र और उसमें भी विशेषत: नायक से पृथक कथावस्तु का कोई अर्थ नहीं होते।

कथावस्तु के बीच कवि को स्वयं अवतरित होने का अवसर नहीं मिलता। अपनी-अपनी बातों को पात्रों के माध्यम से ही कहता है। विशेषत: नाटककार अपने जीवन दर्शन को नायक के माध्यम से ही अभिव्यक्त करता है। सामान्य पात्र को न तो उतना स्थान मिलता और न ही वे कवि के दर्शन को दक्षतापूर्वक उपस्थित ही कर पायगा। लेखक का दर्शन भी तो सामान्यत: अर्थ सिद्धि होती सम्बद्ध रहता है और वह केवल नायक की अधिकार सीमा के अन्तर्गत है, क्योंकि कोई अन्य पात्र उसका भोक्ता नहीं हो सकता।

नाटक नायक की प्रवृत्ति के अनुरूप ही होती है। यदि काव्य वीररस प्रधान है तो उसके लिए सबसे पहले नायक के स्वरूप के ध्यान में रखना होगा कि वह उत्साह शौर्य आदि गुणों से सम्पन्न हो। भीरु, थापर, उत्साह हीन पात्र द्वारा वैसा कार्य व्यापार प्रदर्शित ही नहीं किया जा सकता, जिससे पाठकों के वीररस का संचार हो सके। इसी तरह श्रृंगार रसप्रधान नाटक के लिए ऐसे नायक भी आवश्यकता पड़ेगी जो अनुरागी, ललितकला पारखी, मृदुभाषी, तरुण आदि गुणों से युक्त हो। इसीलिए तो भारतीय नाट्यदशा स्त्रियों ने रस परिपाक को ध्यान में रखकर ही विभिन्न अंगीरानी के नाटकों के लिए अलग-अलग नायकों का स्वरूप विधान किया है। यदि काव्य रचना में उचित नायक के चयन पर ध्यान नहीं दिया जाय तो सम्यक् रूपेण रस परिपाक नहीं हो सकेगा।

प्रभाव की दृष्टि से:

सामान्यत: सफल भूमिका प्रस्तुत करने वाले सभी अभिनेता (काव्यशास्त्र) जनसामान्य पर अपना प्रभाव छोड़ जाते है। कभी-कभी तो ऐसा होता है कि अप्रधान या गौण पात्र ही सहृदचजन को अधिक प्रभावित कर जाता है। परन्तु समग्र काव्य प्रभाव की दृष्टि से नायक का स्थान तो सर्वोपरि होता है कथा में आदि से अन्ततक नायक ही पाठक को प्रभावित किये रहता है और अपनी फल प्राप्ति के साथ ही वह सबको आनन्दमग्न कर देता है। यदि नायक में वह तेज ही नहीं होगा, वह प्रभावशीलता ही नहीं होगी तो सम्पूर्ण काव्य ही व्यर्थ हो जायगा। काव्य में निहित भावों,, समस्याओं और घटनाओं के सर्वथा अनुरूप अपने आपको ढालकर ही नायक पाठकों पर अमिट छाप छोड़ सकता है।[2]

नायक के अपेक्षित गुण

प्राचीन नाट्य शास्त्रियों के अनुसार नायक में कुछ अपेक्षित गुणों का होना अनिवार्य है। धनञ्जय ने नायक के लिए निम्नलिखित सामान्य गुणों का उल्लेख किया है-

नेता विनीतो मधुरस्त्यागी दक्ष: प्रियंवद:।
रक्तलोक: शुचिर्वाग्मी रूढवंश: स्थिरो युवा।
बुद्धयुहसार स्मृति प्रज्ञाकलामान समन्वित:।
शूरो दृढश्च तेजस्वी शास्त्रचक्षुच्य धार्मिक:।[3]

आचार्य विश्वनाथ ने बतलाया है-

त्यागी कृती कुलीन: सुश्रीको रूपयौवनोत्साही।
दक्षोऽनुरक्तलोक स्तेजोवैदग्धमशीलवान् नेता।[4]

अर्थात् नायक को विनयशील, मधुरभाषी त्यागी, चतुर, प्रियभाषी लोकरंजन, वाक्पटु, कुलीन, स्थिर, तरूण, उत्साही, तेजस्वी, वीर धार्मिक आदि होना चाहिए। वस्तुत: नायक में कम से कम इतने गुण तो होने ही चाहिए, जिनसे वह प्रतिनिधित्व करने में समर्थ रहें और लोगों का आदर और विश्वास पैदा कर सके। महले के नाटकों एवं महाकाव्यों में नायक को प्रसिद्ध पात्र ही होता था, यथा-राजा ब्राह्मण आदि। पूर्वोक्त गुणों के अतिरिक्त नायक के लिए जो आठ सात्त्विक गुण शोभा, विल्लास माधुर्य, गाभ्भीर्य, स्थैर्य, तेज, ओर ललित औदार्य आवश्यक माने गये है, ये साधारण लोगों में प्राय: नहीं दिखायी पड़ते। सचमुच इसके लिए राजा अथवा ब्राह्मण ही उपर्युक्त प्रतीत होते है। परन्तु, सामाजिक परिवर्तन के कारण अब ऐसी धारणा भी विकसित हुई है कि सामान्य व्यक्ति को भी नायक बनाया जा सकता है। ऐसे लोगों का यह कहना है कि सामान्य व्यक्ति की दुर्बलता के प्रति

लोगों की सहानुभूति जगायी जा सकती है। फिर उसके सीमित व्यक्तित्व से ही कोई ऐसा कार्य कराया जा सकता है जो उत्कर्ष का हेतु बन जा सकता है।

नायक के भेद

गुण के आधार पर नायक के चार भेद बतलाये गये हैं- धीरोदात्त धीरललित, धीरप्रशान्त और धीरोद्धती। नाट्यदर्पणकार ने धीरोदात्त नायक की विशेषता बतलायी है- धीरोदात्तोऽतिगभ्भीरो न्यायी सत्त्वी क्षमीस्थिरः[5]

अर्थात् धीरोदात्त नायक उसे कहते है, जो क्रोध, शोक आदि बिकारों से विचलित नहीं है, हर स्थिति में सुगम्भीरता का परिचय दे, स्थिर स्वभाव का हो, विनम्रतायुक्त स्वाभिमान कवी अपनी प्रशंसा आप न करे, क्षमाशील बना रहे और अपना प्रण पूर्ण कर दिखावे।

धीरललित- इसका लक्षण ही निश्चितों धीर ललितः कलासक्तः सुखीमृदु

धीरललित नायक कलाप्रेमी, चिन्तामुक्त, कोमल स्वभाववास्था और सदा सुख का अनुभव करने वाला होता है। श्रृंगार प्रियता धीर ललित नायक का अपरिहार्य लक्षण है।

धीरप्रशान्त- यह नायक अहंकार शून्य विनयशील, दयालु, और नीति के अनुसार आचरण कानेवाला होता है-

धीरशान्तोऽनहङ्गरः कृपालुर्विनयी नयी।

इस नायक की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उसमें अहंकार का लेश भी नहीं होता। वह सभी स्थितियों में पूर्णत्या शान्त रहता है कि वह सदा दूसरों के हित की बात सोचता है और सबके साथ सद्भावपूर्ण व्यवहार करता है।

धीरोद्धत नायकः

धीरोद्धत श्चलश्चण्डो दर्पी दम्भी विकत्थनः । इस नायक में घमण्ड, ईर्ष्या चंचलता, क्रोध, आत्मशल्यध ा आदि की प्रधानता होती है। प्रहरी महाराज की उदारता एवं त्यागशीलता की उन्मुक्त कण्ठ से प्रशंसा करते हैं।

जब शत्रु पक्षीय प्रहरी इनकी उदारता का यशोगान कर रहे हैं, तो फिर अन्य जनों की क्या बात? अवश्य ही शिवाजी महाराज दानशील एवं उदारप्रकृति के महामानव हैं। गौरसिंह, श्यामसिंह, रघुवीर, वीरेन्द्र सिंह को भी महाराज ने राज्य का एक-एक भाग दिये, प्रचुर अलंकार एवं शस्त्र दिये। इन व्यक्तियों ने शिवाजी को हरक्षण साथ दिया, इनकी आज्ञा कापालन किया, राष्ट्र की सेवा में इन लोगों ने कुछ भी उठा नहीं रखा । अतएव प्रसन्न होकर अपने राज्याभिषेक के अवसर पर शिवाजी ने इन सभी व्यक्तियों को पुरस्कृत किया।

अपनी कूटनीतिक वार्ता से शिवाजी ने जयसिंह को युद्ध शिथिल कर दिया। यदि शिवाजी इस तरह बातें नहीं करते तो जयसिंह द्वारा आक्रमण कर दिया जाता और शिवाजी के सारे प्रयत्न विफल हो जाते। शिवाजी अपनी कूटनीति एवं युद्धनीति के हमेशा सफल रहे।

दिल्ली नगर निवासियों की दृष्टि में शिवाजी

व्यक्ति स्वयं को जैसा माने, किन्तु अन्य लोगों की दृष्टि से वह जैसा होगा- वही उसका वास्तविक चरित्र है। दिल्ली की सड़कों से शिवाजी जानेवाले है। उनको देखने के लिए समस्त नगर निवासियों की भीड़ उमड़ी हुई है। कोई उन्हें 'महाराष्ट्र राज' के रूप में देखता हे कोई 'अजेय' के रूप में मानता है, कोई इन्हें शाद्स्ता खाँ को दण्ड देने की पद्धति में मर्मज्ञ मानता है, कोई इन्हें बीजापुर के ऊपर विजय पाने के लिए इनको दीक्षित समझता है। गोलकुण्डा और सूरत को वश में करने वाले भी पे ही है। जयपुर नरेश के प्रेम बन्धन में बँधने वाले भी ये ही हैं।

यहाँ कवि ने शिवाजी के शौर्य को समवाय रूप में व्यक्त कर दिया है। शिवाजी उदान्त नायक है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूचीः

1. संस्कृत साहित्य का इतिहास-डॉ॰ उमाशंकर शर्मा 'ऋषि'
2. भारतीय साहित्य का इतिहास - विन्टरनित्स
3. शिवराज विजय - अम्बिकादत्त शास्त्री
4. श्री देवदेवेश्वर महाकाव्यम्-बसन्त त्रयम्बक शेवडे
5. साहित्य दर्पण - पं॰ विश्वनाथ